

जनवरी १९८९ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

बुद्ध और धर्म

(८)

धर्म क्या है? धारण करे सो धर्म। 'धारेती'ति धम्मं।'

क्या धारण करे? अपने स्वभाव को धारण करे सो धर्म।

'अत्तनो सभाव धारेती'ति धम्मं।'

इसीलिए धर्म कहते हैं स्वभाव को, निसर्ग को, प्रकृति को, प्रकृति के नियम को, कुदरतके कानूनको, विश्व के विधान को या ऋतको।

जब कहे अग्नि का धर्म है जलना और जलाना, तो अर्थ हुआ अग्नि का स्वभाव है जलना और जलाना। यह प्रकृति का एक नियम है।

जब कहें कि सभी वस्तुएं अनित्यधर्मा हैं। सारे पदार्थ जीर्ण धर्मा हैं। सारे प्राणी जराधर्मा हैं, मरणधर्मा हैं तो यही अर्थ हुआ कि यह उनका स्वभाव है। यह प्रकृति का एक नियम है।

इसमें हिन्दूपने की या बौद्धपने की या जैन, सिक्ख, मुस्लिमपने आदि की क्या बात आयी भला? यह न हिन्दू धर्म है, न बौद्ध धर्म है, न मुस्लिम और न ईसाई धर्म है।

यह तो बस धर्म है। सार्वजनीन है, सार्वदेशिक है, सार्वकालिक है।

इसी प्रकार जब किसी के मन में क्रोध जागता है, द्वेष-दुर्भाव जागता है तो वह दुःखी हो ही जाता है, व्याकुल हो ही जाता है- चाहे वह हिन्दू हो, जैन हो, बौद्ध हो, मुस्लिम हो, सिक्ख हो या ईसाई हो। यह धर्म है, यह प्रकृति का नियम है। यह हो नहीं सकता कि कोई अपने मन में क्रोध जगाए और उसका मन प्रसन्नता से भर जाय। प्रकृति किसी का लिहाज नहीं करती, किसी का पक्षपात नहीं करती। ठीक इसी प्रकार जब किसी के मन में मैत्री जागती है, करुणा, मुदिता, सद्भावना जागती है, तो उसका मन सुख-शांति से भर ही जाता है। यह प्रकृति का अटूट नियम है। यह व्यक्ति हिन्दू है या बौद्ध, मुस्लिम है या ईसाई; प्रकृति किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करती।

जैसे हम आग और उससे उत्पन्न जलन को हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, जैन आदि नहीं कह सकते, जैसे हम क्रोध और उससे उत्पन्न संताप को हिन्दू, मुस्लिम, जैन इत्यादि नहीं कह सकते, जैसे हम सद्भाव को और ससे उत्पन्न शांति-सुख को हिन्दू, मुस्लिम, जैन आदि नहीं कह सकते, वैसे ही हम कुदरतके कानूनको याने धर्म को हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, सिक्ख, जैन आदि नहीं कह सकते। कहना भी नहीं चाहिये।

जब किसी व्यक्ति में क्रोध जागता है तो उस पर कहाँलेबल लगाते हैं कि यह हिन्दू क्रोध है, यह जैन क्रोध है, यह बौद्ध क्रोध है, आदि आदि...। क्रोध क्रोध है, जलायेगा ही। जो क्रोध जगाए वही जलेगा।

बर्फ का धर्म है माने स्वभाव है शीतल होना, शीतल करना। मैत्री, करुणा, सद्भावना का धर्म है याने स्वभाव है शीतल होना, शीतल करना। जैसे हम बर्फ को हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, सिक्ख, जैन आदि नहीं कह सकते, वैसे ही हम मैत्री, करुणा सद्भावना को हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, सिक्ख, जैन आदि नहीं कह सकते। वैसे ही हम धर्म को, कुदरतके कानून को, विश्व के विधान को, ऋतको; हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध, सिक्ख, जैन आदि नहीं कह सकते। धर्म को मात्र धर्म ही कहना समीचीन है, उपयुक्त है, ठीक है। इससे कोई भ्रांति पैदा नहीं होगी।

आदमी जब जब अपना मन मैला करता है याने उसमें विकार जगाता है- क्रोध, द्वेष, दुर्भावना, ईर्ष्या, अहंकार, वासना, भय आदि आदि तो प्रकृति उसे दंड देती है। तत्काल दंड देती है। वह व्यक्ति तुरंत व्याकुल हो जाता है।

आदमी जब जब अपना मन निर्मल करता है याने विकार-विमुक्त होता है तो स्वभाव से सद्गुणों से भर जाता है। जैसे मैत्री, करुणा, मुदिता, समता, सद्भावना, निःस्वार्थ सेवाभाव आदि आदि। तो प्रकृति उसे पुरस्कार देती है, तत्काल पुरस्कार देती है। वह व्यक्ति तुरंत सुख-शांति अनुभव करने लगता है।

ये प्रकृति के बंधे बंधाए नियम हैं, ये कुदरतके कानून हैं और यही धर्म है। इसका संप्रदाय से कहीं दूर परे का भी संबंध नहीं है।

जो व्यक्ति कुदरतके इस कानूनको अच्छी तरह जान लेता है, याने धर्म के स्वरूप को अच्छी तरह जान लेता है और अपना जीवन इस कानून के अनुकूल ढाल लेता है याने मन को मैला नहीं करता जिससे कि प्रकृति का दंड भोगना पड़े। बल्कि मन को निर्मल करता है जिससे कि प्रकृति का पुरस्कार मिलता रहे। ऐसा व्यक्ति धर्मचारी है, धर्मविहारी है, धर्मनिष्ठ है, धर्मी है, धार्मिक है। अब वह अपने आपको हिन्दू कहे या बौद्ध या जैन या सिक्ख या मुस्लिम या ईसाई कहे अथवा अपने आपको इनमें से किसी सांप्रदायिक नाम से न पुकारे, वह व्यक्ति निश्चितरूप से धार्मिक व्यक्ति है। वह व्यक्ति अच्छा जीवन जीता है, अपना भी मंगल साधता है, औरों का भी मंगल साधता है।

दूसरी ओर कोई व्यक्ति कुदरतके कानून को याने धर्म को नहीं समझता और ऐसे विकारभरे चित्त का जीवन जीता है कि जिससे कदम कदम पर उसे प्रकृति का दंड भोगना पड़ता है, वह कभी विकार-विहीन होना सिखाता ही नहीं, अतः प्रकृति का पुरस्कार उसे कभी प्राप्त होता ही नहीं। ऐसा व्यक्ति अधर्मचारी है, अधर्मविहारी है, अधार्मिक है, अधर्मी है, पापी है, पापचारी है। चाहे वह अपने आपको हिन्दू कहता फिरे या बौद्ध या जैन या सिक्ख या मुस्लिम या ईसाई। इन सांप्रदायिक नामों से वह व्यक्ति धार्मिक नहीं बन जाता।

कुदरतके कानूनको धर्म कहते हैं। कुदरतका वह कानून जो सब पर लागू होता है। अणु अणु पर जिसकी हुकूमत चलती है। सजीव और निर्जीव सब उस कानूनके आधीन हैं। जो सर्वव्यापी है, घट-घट वासी है, सर्वशक्तिमान है, सार्वजनीन है, सार्वकालिक है, सार्वभौमिक है। ऐसा सर्वव्यापी धर्म कभी संप्रदाय नहीं हो सकता। संप्रदाय की सीमा में नहीं बंध सकता। धर्म तो सार्वजनीन ही होता है, सार्वजनीन ही होगा।

धर्म हिन्दू नहीं होता, मुस्लिम नहीं होता, बौद्ध, जैन, सिक्ख ईसाई, नहीं होता। धर्म बस धर्म होता है। हिन्दू, मुस्लिम, जैन आदि धर्म नहीं, संप्रदाय होते हैं। भिन्न भिन्न समूह। ऐसे समूह जो कि किसी एक तरह के पर्व-त्योहार मनाते हैं, जश्न-उत्सव मनाते हैं। एक प्रकार के व्रत-उपवास करते हैं, एक प्रकार के पूजा-पाठ करते हैं, कर्मकांड करते हैं, किन्हीं स्थानों की तीर्थयात्रा करते हैं अथवा कोई एक प्रकार की दार्शनिक मान्यता मानते हैं, जिसका लगभग एक तरह का रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा और एक तरह की विचारधारा होती है।

किसी एक संप्रदाय की सारी शर्तें पूरी करनेवाला व्यक्ति हो सकता है नितान्त धर्मशून्य मानते हो और यह भी हो सकता है कि वह धर्मवान हो। क्यों कि इन सांप्रदायिक बातों से धर्म का कोई लेन देन नहीं है। धर्म तो अन्तर्मन तक चित्त को शुद्ध करना सिखाता है। ताकि शरीर और वाणी से काई ऐसा काम न करें जिससे अन्य प्राणियों को हानि हो, उन्हें पीड़ा पहुँचे, उनकी सुख-शांति भंग हो।

हिन्दू धर्म हिन्दुओं का है, बौद्ध धर्म बौद्धों का है, जैन धर्म जैनियों का है, सिक्ख धर्म सिक्खों का है, इस्लाम धर्म मुसलमानों का है, ईसाई धर्म ईसाइयों का है, पारसी धर्म पारसियों का है, यहूदी धर्म यहूदियों का

है, पर धर्म तो सब का है। शील सदाचार का पालन करना सब का धर्म है। मन को वश में करना सब का धर्म है। मन को निर्मल करना सब का धर्म है और यही सही धर्म है।

कोई एक व्यक्ति कि सी एक जाति विशेष में, वर्ण विशेष में जन्मा होने के कारण गर्व घमंड से भर उठता है, अपने आपको बहुत महान मानने लगता है। अन्य वर्णों में, अन्य जातियों में जन्मे हुए लोगों को तुच्छ मानता है, उनसे घृणा करता है, उन्हें अस्पृश्य घोषित करता है तो समझ लेना चाहिए कि इस व्यक्ति में धर्म का नामोनिशान नहीं है। ऐसा व्यक्ति नितांत अधार्मिक ही है।

इसी प्रकार कोई व्यक्ति कि सी एक संप्रदाय का सदस्य होने के कारण गर्व-घमंड से भर उठता है, अपने आपको महान मानने लगता है, अन्य संप्रदाय के लोगों को तुच्छ मानता है, उनसे घृणा करता है तो समझ लेना चाहिए कि इस व्यक्ति में धर्म का नामोनिशान नहीं है। ऐसा व्यक्ति घोर अधार्मिक व्यक्ति ही है।

जो धर्म को समझता है वह इस बात को खूब समझता है कि कि सी जाति, वर्ण, संप्रदाय अथवा देश-प्रदेश का होने मात्र से कोई आदमी ऊंचा अथवा नीचा नहीं होता। धर्म के मापदंड से ऊंचा वही है जो शीलवान है, जो समाहित चित्त है, जो प्रज्ञावान है, निर्मलचित्त है। और नीचा वही है जो दुःशील है, दुष्प्रज्ञ है, समल चित्त है। और जो व्यक्ति नीचा है, दुःशील है, दुश्चित्त है, दुष्प्रज्ञ है उसे पूरी सुविधा है, पूरी सहूलियत है, पूरा अधिकार है कि वह पुरुषार्थ करके इसी जीवन में सुशील बन जाय, समाहित चित्त बन जाय, सप्रज्ञ बन जाय, निर्मलचित्त बन जाय, सज्जन-संत बन जाय और इस प्रकार महान बन जाय। वह व्यक्ति चाहे जिस जाति, वर्ण, गोत्र का हो, चाहे जिस संप्रदाय का हो, चाहे जिस देश का हो, कोई फर्क नहीं पड़ता। धर्म तो सबका है, सार्वजनीन है, सार्वभौमिक है। इस पर कि सी जाति, वर्ण व संप्रदाय के व्यक्तियों का एक अधिकार नहीं होता।

जाति-पांति के भेदभाव से धर्म की हानि होती है। अधर्म फैलता है। लोगों में दुर्भावना फैलती है। परस्पर बैर बढ़ता है। समाज की सुख-शांति नष्ट होती है।

संप्रदाय-संप्रदाय के भेदभाव से धर्म की हानि होती है, अधर्म फैलता है, लोगों में दुर्भावना बढ़ती है, परस्पर बैर बढ़ता है, समाज की सुख-शांति नष्ट होती है।

जातिपांति का भेदभाव विभाजन करता है। दीवारें खड़ी करता है।

धर्म दीवारें तोड़ता है, एकता स्थापित करता है।

संप्रदाय बाड़े बांधता है। धर्म बाड़े तोड़ता है। भेदभाव मिटाता है।

जातिपांति, संप्रदाय लोगों को तोड़ते हैं। धर्म लोगों को जोड़ता है।

जातिवाद और संप्रदायवाद धर्म के बड़े दुश्मन हैं। मनुष्य समाज के बड़े दुश्मन हैं।

जहां जातिवाद और संप्रदायवाद प्रमुख-प्रबल है वहां धर्म नहीं फैल सकता, लोगों में सही सुख-शांति नहीं फैल सकती।

धर्म तो सबका है। सभी समय, सभी जगह, सभी के लिए समान रूप से कल्याणकारी है।

जैसे सूरज सबका है। सबको एक जैसा प्रकाश, एक जैसी ऊष्मा देता है। जैसे हवा सबकी है, नदी सबकी है, बादल सबका है। कोई जातिपांति या वर्ण या संप्रदाय का भेदभाव नहीं। वैसे ही धर्म सबका है।

सबका हितैषी है। इसे कोई भी धरण कर सकता है और लाभान्वित हो सकता है। स्त्री हो या पुरुष, ब्राह्मण हो या शूद्र, हिन्दू हो या मुसलमान, बौद्ध हो या जैन, सिक्ख हो या ईसाई, हिन्दुस्तानी हो या पाकिस्तानी, ईरानी हो या यूनानी, चीनी हो या जापानी।

सभी शील सदाचार का पालन कर सकते हैं। सभी अपने सामान्य स्वाभाविक सांस को देखते देखते मन को वश में कर सकते हैं। सभी अपने चित्त और शरीर की संवेदनाओं को देखते देखते विकारों से विमुक्त हो सकते हैं। सभी दुःख-विमुक्त होकर एक जैसी सुख-शांति का अनुभव कर सकते हैं। चित्त को नितांत निर्मल करके निर्विकार करके सदा के लिए सर्वथा विमुक्त हो सकते हैं। कोई भेदभाव नहीं।

कोई बुद्धिमान व्यक्ति इस बात को समझ लेता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, उसे समाज में रहना है। अतः वह ऐसा कोई काम नहीं करे जिससे समाज की सुख-शांतिदायिनी व्यवस्था भंग हो। समाज की सुख-शांति भंग होती है तो स्वयं उसे सुख-शांति कहां मिलेगी। वह यह भी समझ लेता है कि जो काम दूसरे लोग उसके प्रति करें और वह उसे अच्छे न लगे तो ऐसे काम उसे भी दूसरों के प्रति नहीं करने चाहिए। क्योंकि उनको भी ऐसे काम नहीं अच्छे लगेगे।

इन दोनों बातों को समझकर वह शरीर और वाणी से कोई ऐसा काम नहीं करता जिससे अन्य प्राणियों की सुख-शांति भंग हो, अन्य प्राणियों का अहित, अमंगल हो, उन्हें पीड़ा पहुंचे। मसलन - • वह शरीर से हत्या नहीं करता। • चोरी नहीं करता। • व्यभिचार नहीं करता। • वह वाणी से झूठ नहीं बोलता; परनिंदा, चुगली, निकम्मी, निरर्थक बात नहीं करता। • वह नशे-पते का सेवन नहीं करता। क्योंकि खूब समझता है कि नशे का गुलाम हो जायगा तो शरीर और वाणी के दुष्कर्मों से बचना उसके लिए कठिन हो जायगा। असंभव हो जायेगा।

ऐसा बुद्धिमान व्यक्ति जब कभी अन्तर्मुखी होकर धर्म का दर्शन करता है याने कुदरत के कानून को स्वानुभूतियों के स्तर पर जान लेता है तो उसके लिए यह सब कुछ बहुत स्पष्ट हो जाता है कि कि सी भी शारीरिक या वाचिक दुष्कर्म करने के पहले उसे अपने मन में कोई न कोई विकार जगाता पड़ता है और हर मनोविकार उसे बेचैन बना देता है। वह कुदरत के दंड का भागी हो जाता है।

अतः अब वह खूब समझने लगता है कि शारीरिक और वाचिक दुष्कर्म से वंचित रहकर वह समाज के अन्य लोगों पर कोई अहसान नहीं कर रहा। वह तो दरअसल अपने आप पर एहसान कर रहा है। अपने आप को कुदरत के दंड से बचा रहा है।

ऐसा व्यक्ति अत्यंत निष्ठापूर्वक दुराचार से बचता है। शील-सदाचार का पालन करता है। ऐसा करने के लिए वह अपने मन को वश में करने और मन को निर्मल करने का, राग-मुक्त, द्वेषमुक्त करने का उचित अभ्यास करता है।

ऐसा व्यक्ति अपना भला करता है, औरों के भले में सहायक हो जाता है। ऐसा व्यक्ति अपना मंगल साधता है, औरों के मंगल में सहायक हो जाता है।

ऐसा व्यक्ति संत है, सज्जन है। ऐसा व्यक्ति ही सही माने में धार्मिक है। ऐसा व्यक्ति हिन्दू हो तो धार्मिक है। बौद्ध, ईसाई, जैन, मुस्लिम हो तो धार्मिक है। सच्चा धार्मिक व्यक्ति कि सी संप्रदाय के बाड़े में बांधा नहीं जा सकता। वह सांप्रदायिकता की जंजीरों से मुक्त रहता है।

कोई बुद्ध होता है, तो वह ऐसा ही धर्म सिखाता है। आओ साधकों! ऐसे ही धार्मिक बनें और अपना कल्याण साध लें!

कल्याण मित्र,

स.ना.गो.